अक्तूबर १९९८ हिंदी पत्रिका में प्रकाशित

धारण करे तो धर्म

शुद्ध श्वास ही प्रमुख है

(जी-टीवी पर क्रमशः चौवालीस कड़ियों में प्रसारित पूज्य गुरुजी के प्रवचनों की **पांचवीं कड़ी**)

विपश्यना साधना का अभ्यास करने के लिए कोई साधक, कोई साधिका जब विपश्यना की किसी तपोभूमि में आकर दस दिन यह विद्या सीखे तो उसे बहुत अच्छी तरह समझते रहना चाहिए कि इस साधना का अंतिम लक्ष्य क्या है? किसलिए यह साधना कर रहे हैं? अंतिम लक्ष्य भूल जायेंगे तो कहीं न कहीं किसी बीच की स्टेशन पर अटक के रह जायेंगे। तो खूब अच्छी तरह समझते रहें, अंतिम लक्ष्य है – अपने चित्त को विकारोंसे नितांत विमुक्त कर लें, निर्मल कर लें। निर्मल हुआ चित्त ही तो धर्म है। चित्त निर्मल हो और जीवन में धर्म समा जाय तो जीना आ गया। जीने की कला आ गयी। अपना भी मंगल हो गया, औरों के मंगल में सहायक हो गये। धर्म धारण करने का यही तो हेतु है। तो चित्त को नितांत शुद्ध करने के लिए, विकारोंसे नितांत विमुक्त करने के लिए हमें चित्त की उस अवस्था तक पहुँचना पड़ेगा कि जहां विकारोंका उद्गम होता है। जहां विकारों का प्रजनन होता है, जहां विकारोंका संवर्धन होता है, जहां विकारों का संचयन होता है, वहां रोक लगानी होगी और जो संचय कर रखा है, उसका धीरे-धीरे निष्कासन करते-करते चित्त को नितांत निर्मल करना होगा।

विकार हमारे भीतर जागते हैं, बाहर नहीं। प्रिय या अप्रिय घटना बाहर घटती है। अनचाही या मनचाही बातें बाहर होती हैं, पर विकार भीतर जागता है और इस विकार की वजह से जो पीड़ा होती है, जो दुःख होता है, जो संताप होता है वह भीतर जागता है। तो इससे छुटकारा पाने के लिए हमें भीतर की यात्रा करनी होगी। केवल ऊपरी-ऊपरी सच्चाई को जान करके हम उस उद्गम-स्थल तक नहीं पहुँच सकते। शरीर के बारे में पूरी जानकारी करनी होगी। स्थूल से स्थूल सच्चाई से आरंभ करते हुए उससे सूक्ष्म, उससे सूक्ष्म, सूक्ष्मतर, सूक्ष्मतर से सूक्ष्मतम सच्चाई तक पहुँचना होगा। शरीर का कोई क्षेत्र अनजाना न रह जाय।

ठीक इसी प्रकार चित्त के बारे में भी पूरी की पूरी जानकारी करनी होगी। स्थूल से स्थूल सच्चाई से आरंभ करते हुए उससे सूक्ष्म, उससे सूक्ष्म, सूक्ष्मतर, सूक्ष्मतर से सूक्ष्मतम अवस्था तक पहुँचना होगा। यह काम अनुभूतियों के स्तर पर करना पड़ेगा। अपने बारे में याने इस शरीर के बारे में इस चित्त के बारे में क्या सच्चाई है? इसे कोई पुस्तकों को पढ़ करके नहीं जान पायेगा, प्रवचनों को सुन करके नहीं जान पायेगा। मान भले ले, जान नहीं पायेगा। मानने और जानने में तो जमीन-आसमान का अंतर है। मान कर हम अपना कौतूहल पूरा कर लेंगे। मैं कौन हूं? मैं क्या हूं? यह शरीर क्या है? यह चित्त क्या है? यह कौतूहल पूरा हो गया। क्या बात बनी उससे? अनुभूति पर उतरेगा तो खूब समझ में आयेगा कि यह सारी जानकारी हमारे सामने कुदरत का सारा रहस्य खोल रही है। किस प्रकार शरीर और चित्त के संसर्ग से विकारोंका प्रजनन हो रहा है? किस प्रकार इनका संवर्धन हो रहा है? अनुभूतियों के स्तर पर काम करेंगे तो खूब समझ में आने लगेगा। धर्म के सार को समझना है, सत्य के सार को समझना है तो हमें शरीर के भीतर यात्रा करनी होगी। अन्यथा छिलकों में ही सारा जीवन बीत जायगा, छिलकों को ही महत्त्व देते चले जायेंगे।

अपने भारत का एक महान भक्त नरसी मेहता कहता है –

"शरीर सोधे बिना, सार नहीं सांपड़े....॥"

– शरीर के भीतर सत्य की शोध किये बिना सार मिलता नहीं।

शरीर संबंधी सारी सच्चाई अनुभूति पर उतरे, चित्त संबंधी सारी सच्चाई अनुभूति पर उतरे, तो सार पकड़ में आ गया। धर्म का सार समझ में आ गया, तो मुक्ति का रास्ता खुल गया। विकारोंसे मुक्त होने का रास्ता मिल गया। इसके लिए अपने भीतर यात्रा करनी होगी। संतों ने यही किया।

इसीलिए भारत का एक और संत कहता है –

"तीन हाथ एक अड़धायी, ऐसा अंबर चीह्नो मेरे भाई!

ऐसा अंबर खोजो मेरे भाई!!"

– वह अंबर, वह अंतरिक्ष जो हमारे भीतर है उसकी खोज करनी है, उसके बारे में पूरी-पूरी जानकारी हासिल करनी है। और यह विद्या, अगर शुद्ध रूप में इसका प्रयोग करते चले जायेंगे तो यह सब कुछ करवा देगी।

२५०० वर्षों से जिन्होंने इस विद्या को शुद्ध रूप में कायम रखा, तो देखा कि जहां-जहां इस विद्या का प्रयोग जिसने भी किया, वही परिणाम आते गये। चित्त निर्मल होता गया। तो भूल कर भी इसमें किसी प्रकार का सम्मिश्रण नहीं होने दें। न इसमें से कुछ निकालने की कोशिश करें, न इसमें कुछ जोड़ने की कोशिश करें। फिर देखें, वही परिणाम आयेंगे जो आज तक आते आये हैं। शुद्ध सांस का काम करना है। इसके साथ कोई शब्द भूल कर भी जुड़ न जाय। इसके साथ कोई कल्पना भूल कर भी जुड़ न जाय। इसके साथ कोई दार्शनिक मान्यता भूल कर भी जुड़ न जाय। केवल सांस, नैसर्गिक सांस, जैसे भी आ रहा है, जैसे भी जा रहा है। बस, केवल जानते जायेंगे, जानते जायेंगे, तो सांस के सहारे-सहारे यात्रा करते-करते जो कुछ जानने योग्य है, शरीर के बारे में, चित्त के बारे में, वह सारा जान जायेंगे। वह सारा अपनी अनुभूति पर उतार लेंगे।

कोई सामान्य साधक अपने शरीर के बारे में क्या जानता है? कितना कम जानता है! कोई एनाटोमी की पुस्तक पढ़ी होगी और इस भ्रम में होगा कि मैं खूब जानता हूं कि शरीर कैसा है, क्या है? बाहर से कैसा है, भीतर से कैसा है? लेकिन जानता नहीं, मानता ही

है। अभी जाना नहीं क्योंकि वे सच्चाइयां अनुभूति पर उतरी नहीं। बाहर-बाहर के अंगों की सच्चाइयां अनुभूति पर उतार चुका है। अपने हाथों के बारे में जानता है, अपने पांवों के बारे में जानता है। अपनी आंखों के बारे में जानता है, इत्यादि-इत्यादि। वे सारे अंग जो हमारी इच्छाओं के अनुसार काम करते हैं, हमारे हुक्म के अनुसार काम करते हैं, उनके बारे में खूब जानते हैं। यदि मैं चाहूं कि मेरा पांव खड़ा हो जाय, तो खड़ा होता है। चले, तो चलता है। रुके ,तो रुकता है। यदि चाहूं, हाथ उठे, तो उठते हैं। आंख खुले, तो खुलती है। बंद हो जाय, तो बंद होती है। हमारे हुक्म के ताबेदार हैं। हम जैसे कहें, वैसे काम करते हैं। हम इनसे सायास काम करवा सकते हैं। लेकिन शरीर के भीतर कितने बड़े-बड़े अंग हैं – जैसे हृदय, फेफड़े,यकृत और भी कई बड़े-बड़े अंग हैं। उनके बारे में क्या जानते हैं? जो अनायास काम कर रहे हैं, कुदरतन काम कर रहे हैं, नैसर्गिक तौर पर काम कर रहे हैं। वे हमारे हुक्म का इंतजार नहीं करते।हम चाहें कि रुक जाओ, तो नहीं रुकेंगे।हम चाहें कि तेज हो जाओ, तो तेज नहीं होंगे। हम चाहें कि धीमे हो जाओ, तो धीमे नहीं होंगे। वे अनायास ही काम करेंगे।हम उनसे सायास कोई काम नहीं करवा सकते।उनके बारे में क्या जानते हैं? अनुभूति के स्तर पर कुछ नहीं जानते। बुद्धि के स्तर पर हजार जानेंगे लेकिन जब तक बुद्धि के साथ अनुभूति भी न जुड़ जाय, तब तक जानना नहीं हुआ। कौतूहल पूरा करना हुआ। बुद्धि-विलास हुआ। बुद्धि का अपना उपयोग है। अनुभूति के साथ-साथ बुद्धि भी काम करेगी, पर अनुभूति नहीं छूटे। कदम-कदमअनुभूति के साथ और अनुभूति वह जो हमारे शरीर और चित्त से संबंध रखने वाली हो। अन्य कोई बात नहीं। हमको अनुसंधान अपने शरीर के बारे में करना है, अपने चित्त के बारे में करना है। ऊपर-ऊपर की इन सच्चाइयों को ही जान कर नहीं रह जायेंगे बल्कि इस सांस के सहारे-सहारे हम भीतर की यात्रा करनी शुरू कर देंगे।

तीन दिनों तक अपने मन को शरीर के इस दरवाजे (नाक के बाहरी द्वार) पर लगाये रखा –यहां खड़ा होना सीख। यह सांस आ रहा है, जा रहा है। अरे, तू यहीं स्थिर होकर के खड़ा नहीं हो सकता तो भीतर की यात्रा कैसे करेगा?यहां स्थिर होकर के सांस के बारे में जान रहा है, सांस के बारे में जान रहा है। यों जानते-जानते अपनी क्षमता बढ़ा रहा है, अपनी शक्ति बढ़ा रहा है ताकि भीतर की सच्चाइयों को जानने योग्य हो जाय। सांस के बारे में एक बात जान गया कि सांस केवल शरीर की ही प्रक्रिया मात्र नहीं है। इसका मन से भी बहुत गहरा संबंध है। मन के विकारों से तो और गहरा संबंध है। ऐसा अपनी अनुभूति से जान गया। क्यों जान गया? क्योंकि केवल सांस का काम कर रहा था। यदि उसके साथ कोई शब्द जोड़ देता, कोई रूप जोड़ देता, कोई कल्पना जोड़ देता तो उसी में उलझ कर रह जाता। फिर यह अनुसंधान करने वाला काम नहीं होता। अपने बारे में सच्चाई को जानने का जो अनुसंधान करना है, वह रुक जाता।

शरीर के बारे में गहराई तक अनुसंधान करके सच्चाई जाननी है इसीलिए केवल सांस, शुद्ध सांस का सहारा लिया। शरीर का एक क्षेत्र जिसे हम ज्ञात क्षेत्र कहें,यह बाहर-बाहर के अंगों का क्षेत्र 'ज्ञात क्षेत्र' है। और शरीर का एक बहुत बड़ा क्षेत्र जो 'अज्ञात क्षेत्र' है, जिसके बारे में अनुभूतियों से हम कुछ नहीं जानते। ज्ञात क्षेत्र से अज्ञात क्षेत्र की ओर बढ़ते हुए हम उस अज्ञात को भी ज्ञात कैसे बनावें! इसके लिए यह सांस हमारी मदद करेगा। सांस शरीर की एक ऐसी प्रक्रिया है जो सायास भी काम करती है और अनायास भी काम करती है। हम चाहें कि अपने सांस को तेज करें तो तेज कर सकते हैं। धीमा करना चाहें तो धीमा कर सकते हैं। रोकना चाहें तो रोक भी सकते हैं, भले थोड़ी-सी देर के लिए, रोक भी सकते हैं। तो यह सांस हमारे हुक्म के मुताबिक भी काम करती है और हमने हुक्म देना बंद कर दिया तो भी अनायास काम करती जाएगी। अनायास सांस आ रही है, जा रही है, आ रही है, जा रही है। तो सांस से सायास भी और अनायास भी, दोनों तरह के काम होते हैं। तो शरीर का एक वह क्षेत्र, जो सायास काम करता है, हम जैसे चाहें वैसे काम करता है, हमारे प्रयत्नों के अनुसार काम करता है और शरीर का दूसरा वह क्षेत्र, जो अनायास काम कर रहा है – उसके बारे में जानकारी करनी है। उसके लिए यह सांस बहुत उपयोगी होगा।

एक उदाहरण से समझें। नदी के इस तट पर रहने वाला व्यक्ति क्योंकि नदी के इस तट पर रहता है। तो इस तट के बारे में अपनी अनुभूतियों के स्तर पर खूब जानता है। परले तट पर कभी गया ही नहीं, तो क्या जाने परला तट कैसा है? कोई आदमी नदी पार करके उस तट पर चला गया और वहां से लौट करके वापस आया और उसने उस तट का वर्णन किया,अरे, उस तट का क्या कहना!बड़ा सुहावना है। बड़ा मनोरम है, बड़ा मनोरम है। तो नदी के इस तट पर रहने वाले व्यक्ति के मन में आये कि अरे, मैं भी उस मनोरमता का उपभोग करूं!मैं भी उस सुंदर तट को देखूं! तो क्या करे? नदी के इस तट पर खड़ा हुआ हाथ जोड़ करके ,डबडबायी आंखों से और कातर कंठ से खूब प्रार्थना करे –ऐ, नदी के परले तट, तू यहां आ जा। खूब आह्वान करे,ऐ, नदी के परले तट! तू यहां आजा, मैं तेरा दर्शन करना चाहता हूं। मैं तेरा दर्शन करना चाहता हूं। तो सारी जिंदगी रोता रह जायगा। नदी का वह तट यहां आने वाला नहीं। नदी के उस तट की सुषमा का साक्षात्कार करना है तो स्वयं सारी नदी को पार करके वहां तक पहुँचना होगा। तब उसका साक्षात्कार होगा। कैसे पहुँचे? तो कोई एक ऐसा पुल होना चाहिए जो नदी के इस तट को नदी के उस तट से जोड़ दे। यह सांस इस पुल का काम करेगा।क्योंकि सांस दोनों प्रकार से काम करता है। नदी के दोनों तटों की भांति हमारे शरीर के वे अंग जिनके बारे में हमें ज्ञान है, ज्ञात क्षेत्र है माने जो सायास काम करते हैं, हम जैसे चाहें, वैसे काम करते हैं और वे अंग जो हमें अज्ञात हैं, वे अनायास काम कर रहे हैं। वे हमारे प्रयत्नों से नहीं कर रहे, सायास नहीं कर रहे। तो यह श्वास का आवागमन ऐसा है जो सायास भी है, अनायास भी है। शरीर के ज्ञात और अज्ञात दोनों क्षेत्र इस सांस से जुड़े हुए हैं। यदि शुद्ध सांस पर काम करेंगे तो इसके सहारे-सहारे जो अनायास हो रहा है उस अज्ञात क्षेत्र तक पहुँच जायेंगे। सांस की कोई कसरत शुरू कर दी तो उसी में उलझ कर रह जायेंगे। सांस के साथ कोई शब्द जोड़ दिया तो उस शब्द में उलझ कर रह जायेंगे। उसके साथ कोई कल्पना जोड़ दी तो उस

कल्पना में उलझ कर रह जायेंगे और सांस को भूल जायेंगे।

बस, केवल सांस का एक ही आलंबन रहे। सांस आ रहा है तो आ रहा है, जा रहा है तो जा रहा है। बस, इसी के सहारे-सहारे सत्य प्रकट होता चला जायगा। आगे बढ़ते-बढ़ते अपने शरीर के बारे में, अपने चित्त के बारे में सूक्ष्मतम सत्य प्रकट होता चला जायगा। आगे जाकर ऐसी अवस्था आएगी कि इन दोनों के परे जो परम सत्य है, वह प्रकट हो जायगा। तभी कहा गया –

"सांस देखते देखते, सत्य प्रकटता जाय।

सत्य देखते देखते, परम सत्य दिख जाय॥"

तो सहारा सांस का लेना होगा। शरीर के बारे में सारी जानकारियां अपने आप प्राप्त हो जायेंगी। यह जो इतना ठोस-ठोस शरीर लगता है, देखेंगे, इस रास्ते चलते-चलते इसका विघटन हुए जा रहा है। इसका विभाजन हुए जा रहा है। इसके टुकड़े-टुकड़े हो रहे हैं और होते-होते सारा ठोसपना समाप्त हो गया। केवल परमाणु ही परमाणु और परमाणुओं की तरंगें ही तरंगें रह गयीं। उदय होता है, व्यय होता है। उत्पाद होता है, व्यय होता है। केवल तरंगें, केवल तरंगें और कुछ नहीं। वहां तक पहुँचना है। पुस्तकें बहुत पढ़ी हैं कि सारा भौतिक जगत केवल परमाणु ही परमाणु है और हर परमाणु केवल तरंग ही तरंग है। उससे क्या बात बनी? हमें लाभ क्या हुआ? लेकिन अपनी अनुभूति पर यह सच्चाई उतर जाएगी तो रहस्य खुल जायगा। फिर देखेंगे कि सांस का हमारे चित्त से और चित्त के विकारों से कितना गहरा संबंध है! ऐसे ही देखेंगे, इस शरीर का हमारे चित्त से और चित्त के विकारों से कितना गहरा संबंध है, कितना गहरा संबंध है! इसको देखते-देखते उस अवस्था पर जा पहुँचेंगे कि चित्त में कैसे विकार उत्पन्न हुआ और शरीर का उसमें क्या सहारा रहा? शरीर ने कौन-सा पार्ट प्ले किया? चित्त ने क्या पार्ट प्ले किया? कैसे विकार का उद्गम हुआ? और फिर किस प्रकार उसका संवर्धन हुआ? यह सारा रहस्य जब अनुभूति पर उतर जायगा तो उससे छुटकारा पाना सरल हो जायगा। अन्यथा फिर धोखे में ही रहेंगे। विकार जागा है, क्रोध जागा है, तो भ्रम यही रहेगा कि बाहर के किसी व्यक्ति ने मेरा अपमान किया ना! बाहर के किसी व्यक्ति ने मुझे गाली दी ना! इसीलिए क्रोध जागा। इसलिए व्याकुल हुआ।

अरे, तेरे क्रोध का कारण बाहर नहीं है भाई! तेरी व्याकुलता का कारण बाहर नहीं है भाई! जब भीतर देखना शुरू करोगे तो खूब समझ में आयेगा, बाहर की घटना और भीतर जागी हुई व्याकुलता, इन दोनों के बीच की एक और कड़ी है। वह कड़ी सामने आने लगेगी और उस कड़ी को देखते-देखते यह जो कारण है हमारे दुःखों का, इसको दूर करना आ जायगा, इससे छुटकारा पाना आ जायगा।

लेकिन यह तभी होगा जबकि सच्चाई को अनुभूति पर उतारें। सच्चाई अनुभूति पर ही नहीं उतरी। केवल बुद्धि-विलास करके रह गये तो बुद्धि के स्तर पर सच्चाई को समझते-समझते संभव है, हम अपनी बुद्धि को निर्मल कर लें। अच्छी बात है, उतना-उतना तो लाभ हुआ। बुद्धि को निर्मल किया। अरे, कितना छोटा-सा हिस्सा है बुद्धि का! बाकी यह सारा का सारा विकारों से भरा हुआ मानस का इतना बड़ा खंड अनदेखा रह गया, अनजाना रह गया। केवल ऊपर-ऊपर से बुद्धि को निर्मल करके रह गये। इससे हम निर्मल नहीं हुए, सही माने में निर्मल नहीं हुए।

इसलिए सांस के सहारे-सहारे हमें उन अवस्थाओं पर पहुँचना है जहां शरीर और चित्त के पारस्परिक संबंध एक-दूसरे को प्रभावित कर रहे हैं। सांस को और एक-दूसरे को प्रभावित करते हुए किस प्रकार विकारों का प्रजनन कर रहे हैं और किस प्रकार इनका संवर्धन कर रहे हैं। उन्हें देखते-देखते हम विकारों के बाहर निकलना सीख जायेंगे।

विकारों के बाहर निकलेंगे तो ही शुद्ध धर्म धारण कर पायेंगे, शुद्ध धर्म को जीवन में उतार पायेंगे। तो ही कल्याण होगा। सारा का सारा मार्ग हमें शुद्ध धर्म का जीवन जीने योग्य बना देने वाला मार्ग है। जितना-जितना चित्त निर्मल होता जायगा, उतना-उतना जीवन में धर्म समाता जायगा और देखेंगे, उतना-उतना मंगल होने लगा। उतना-उतना कल्याण होने लगा। उतनी-उतनी स्वस्ति, उतनी-उतनी मुक्ति। धर्म धारण करें तो मंगल ही मंगल, कल्याण ही कल्याण, स्वस्ति ही स्वस्ति, मुक्ति ही मुक्ति!